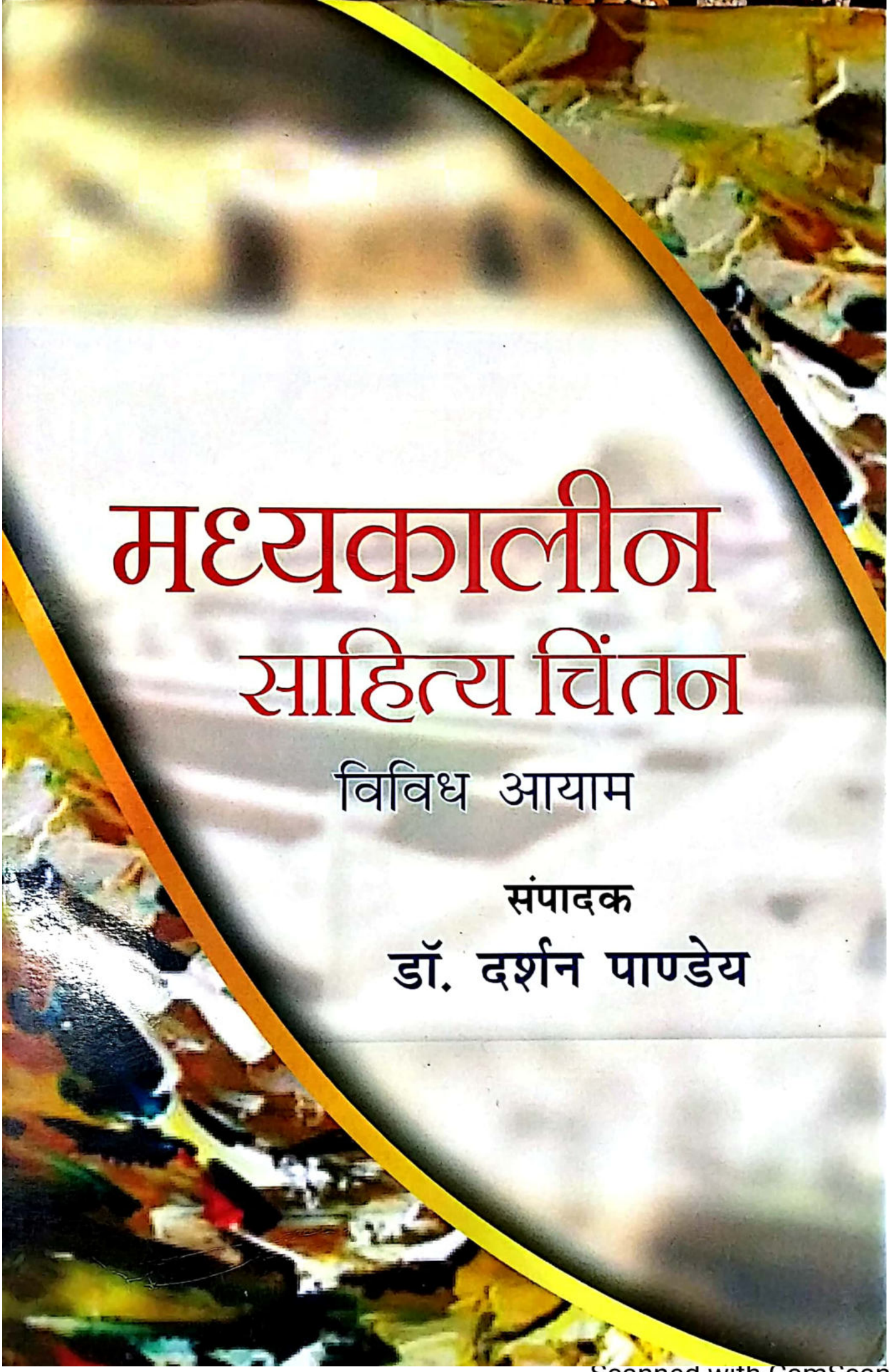

मध्यकालीन साहित्य चिंतन

विविध आयाम

संपादक

डॉ. दर्शन पाण्डेय

Scanned with CamScanner

प्रकाशक :

संजय प्रकाशन

4378/4-B, 209 जे.एम.डी. हाऊस,
मुरारीलाल स्ट्रीट, अंसारी रोड,
दरियागंज-110002
फोन : 011-23245808, 41564415
मो. : 09313438740
E-mail : sanjayprakashan@yahoo.in

© संपादक

ISBN : 978-93-88107-74-7

Price : ₹ 650

प्रथम संस्करण : 2020

टाईप सैटिंग
क्रियेटिव ग्राफिक्स
दिल्ली-53

मुद्रक
रोशन ऑफसेट
दिल्ली

Scanned with CamScanner

विषय-सूची

1. भक्तिकाव्य की आलोचना दृष्टि: एक पुनर्मूल्यांकन
   अरविन्द कुमार यादव 1
2. भक्तिकाल : एक नवजागरण के रूप में
   डॉ० गुंजन 10
3. भक्तिकाव्य का समाज दर्शन
   प्रो० नागरे संतोष साहेबराव 15
4. भक्ति काव्य में मानवतावाद
   प्रो० रामहरी काकडे 19
5. भक्तिकालीन काव्य में अवतारवाद
   डॉ० साधना तोमर 24
6. स्त्री-विमर्श का उद्‌गम स्रोत-भक्ति काल
   तारो सिन्दिक 30
7. मध्ययुगीन नारी संतों की साहित्यिक साधना
   डॉ० मधु वशिष्ठ 37
8. मध्यकालीन हिन्दी संत काव्य की प्रासंगिकता
   प्रो० बालाजी गरड 44
9. साम्प्रदायिक सद्‌भाव और कबीर का काव्य
   अब्दुल लतीफ़ 48
10. कबीर का गुरु विवेक
    डॉ० अमित सिंह 55

Scanned with CamScanner

3

भक्तिकाव्य का समाज दर्शन

प्रो० नागरे संतोष साहेबराव

"भक्ति द्राविडी उपजी लाए रामानन्द,
प्रगट करि कबीर ने सप्तद्वीप नौ खण्ड।"

भक्ति का उदय दक्षिण भारत में हुआ। भक्ति तमिल से कर्नाटक, महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, पंजाब से होते हुए उत्तर भारत में आयी। भक्ति काल में अपने समय के समाज का यथार्थ अंकन हुआ है। तमिल में अलवार, महाराष्ट्र में ज्ञानेश्वर, नामदेव, गुजरात में नरसी मेहता, राजस्थान में मीरा, पंजाब में गुरुनानक, उत्तर भारत में रामानंद, कबीर, जायसी, सूर, तुलसी, असम में शंकरदेव आदि संतों ने अपने साहित्य के माध्यम से अपने समय के समाज को प्रतिबिम्बित किया। भक्तिकाल में लिखा गया समस्त साहित्य जनता को जगाने वाला है। इसलिए भक्तिकाल को 'लोकजागरण', 'नवजागरण' भी कहा जाता है। कबीर इस संदर्भ में कहते हैं,-

"तू कहता है कागद की लेखी।
मैं कहता हूँ आँखन देखी।।"

तत्कालीन समाज परिवेश में व्याप्त जाति-पाति, धार्मिक असहिष्णुता, सामाजिक-धार्मिक पाखण्ड, अंधविश्वास, रुढ़ि, परम्पराओं पर भक्तिकाल में प्रहार किये गये। मनुष्य को मनुष्य के रूप में स्थापित कर मनुष्य के मानवाधिकार की बात सर्वप्रथम भक्ति साहित्य करता है। भक्तिकाव्य जीवन की स्वीकृति का काव्य है। उसमें जनता का उल्लास है, उसका क्रोध और आक्रोश है और साथ ही एक सुखी समाज की अकांक्षा है।

भक्तिकाल के सभी कवियों ने ईश्वर भक्ति के लिए मन की शुद्धता पर बल दिया। संत नामदेव कहते हैं ईश्वर भाव का भूखा होता है न कि दिखावे का। ईश्वर को जल, फूल, खीर अर्पण करने से ईश्वर की कृपा नहीं होगी। ईश्वर इन सब चीजों

Scanned with CamScanner

का आस्वाद अर्पण करने से पूर्व ही ले चुका है। क्योंकि ईश्वर प्राणि-मात्र में विद्यमान है। लेकिन अपढ़ आदमी (आत्मज्ञान से रहित) इसे पहचान नहीं पाता। धार्मिक पाखण्डों की पोल खोलते हुए संत नामदेव कहते हैं-

आनीले कुंभ भराईले ऊदक ठाकुर कऊ इसनानु करऊ।।
बइआलीस लख जो जल महि होते बीठलु मैला काइ करऊ।।
जत जाउ तत बीठलु भैला।। महा अनंद करे सद केला।।
आनीले फूल परोइले माला ठाकुर की हऊ पूज करऊ।।
पहिले बासु लई है भवरह बीठल मैला काह करऊ।।
आनीले दुधु रीधाइले खीरं ठाकुर कऊ नैवेदु करऊ।।
पहिले दुधु बिटारिउ बछारे बीठलु मैला कहा करऊ।।
ईभै बीठलु, उभै बीठलु, बीठल बिनु संसारू नहीं।।
थान थनंतरि नामा प्रणवै पूरि रहिउ तूं सरब मही।।

ईश्वर सर्वव्यापक है। जिस प्रकार फूल में खुशबू समायी है, उसी प्रकार हर चीज में ईश्वर समाया हुआ है। ईश्वर को जंगल, मंदिर, मस्जिद, गिरिजाघर में ढूँढने की आवश्यकता नहीं है। उसे जानने, समझने एवं महसूस करने के लिए गुरू कृपा की आवश्यकता होती है। गुरुनानक इस संदर्भ में कहते हैं-

"काहे रे! बन खोजन जाई!
सर्व-निवासी सदा अलेपा, तोही संग सगाई।।
पुष्प मध्य ज्यों बास बसत है, मुकुर मांहि जस छाई।।
तैसे ही हरि बसै निरंतर, घट ही खोजो भाई।।
बाहर भीतर एकै जानौ, यह गुरू ज्ञान बताई।
जन नानक बिन आपा चीन्हे, मिटै न भ्रम की काई।"

गुरु बिन आत्मज्ञान संभव नहीं और आत्मज्ञान बिना ईश्वर प्राप्ति असंभव है। गुरू के माध्यम से ही ईश्वर तक पहुँचा जा सकता हैं। गुरू हमारे मन के भीतर के षड्विकारों को बाहर निकालकर मन को शुद्ध करते हैं। इसलिए भक्तिकाल के सभी कवियों ने अपने गुरू को सश्रद्ध याद किया है। संत कबीर गुरू की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए कहते हैं-

यह तन विष की बेलरी, गुरू अमृत की खान।
सीस दिये गुरू मिले, तो भी सस्ता जान।।

वर्तमान उपभोक्तावादी दौर में हमारी अपेक्षाएँ बढ़ने लगी हैं। हमारा मन बकरे

Scanned with CamScanner

की तरह अतृप्त रहने लगा है। 'यह दिल माँगे मोर' यह हमारी आज की स्थिति है। अत्यधिक अपेक्षाओं से घिरा हुआ मनुष्य जीवन में अत्यधिक दु:ख सहता है। अपेक्षा भंग के दु:ख से बचने के लिए आज संतों के संतोष या समाधान वृत्ति की आवश्यकता है। संत तुलसीदास इस संदर्भ में कहते हैं–

"जब आवै संतोष धन, सब धन धुरि समान।"

मनुष्य जीवन क्षणभंगुर है। इस क्षणभंगुर जीवन में मनुष्य ने अपनी जाति-पाति, धर्म, वंश, उच्चता, अमीरी पर गर्व नहीं करना चाहिए। भक्तिकाल के सभी कवियों ने समाज को बाँटने वाले तत्वों का विरोध किया। सभी मनुष्यों को बनाने वाला ईश्वर एक ही है। हम सब उसी ईश्वर की संतान हैं। हम सब के शरीर में बहनेवाला खून भी लाल रंग का है, तो फिर यह भेदभाव क्यों? कबीर जाति-पाति का विरोध करते हुए कहते हैं–

हमारे कैसे लोहू, तुम्हारे कैसे दूध।
तुम कैसे बाह्मन पांडे, हम कैसे सूद।।

कबीर ने हिन्दू-मुस्लिमों पर प्रहार कर दोनों को पथभ्रष्ट कहा। उनकी नजरों में वही सच्चा हिन्दू और मुस्लिम है, जिसका ईमान दुरूस्त है। कबीर ने ईमान को ही धर्म माना और धर्म को ही ईमान माना। कबीर कहते हैं–

"वह हिन्दू, वह मुसलमान, जाका दुरूस्त रहे ईमान।"

भक्तिकाल के सभी रचनाकारों ने कर्म पर बल दिया। मनुष्य अपने कर्म से ही महान होता है। भक्तिकाल के रचनाकार आचरण की जीवंत पाठशाला थे। उनकी कथनी और करनी में अंतर नहीं था। भक्तिकाल में मूल्यों की स्थापना पर बल दिया गया। विघटन के इस दौर में 'प्रेम' जैसे शाश्वत मूल्य की नितांत आवश्यकता है। प्रेम के अभाव में सामाजिक स्वास्थ्य असम्भव है। कबीर, जायसी, सूर, मीरा आदि कवियों ने प्रेम की महत्ता का प्रतिपादन किया। जायसी इस संदर्भ में कहते हैं–

"मानस प्रेम भएउ वैकुंठी।"

भक्ति काल के सभी रचनाकार समता के समर्थक हैं। अमीर-गरीब, ऊँच-नीच, जाति-पाति के भेदभाव को मिटाकर वे समता पर आधारित समाज स्थापित करना चाहते हैं। सही अर्थों में यही कल्याणकारी राष्ट्र है। संत रैदास कहते हैं–

ऐसा चाँहू राज मैं, सबन को मिलै अन्न।
छोटे-बड़े सम रहैं, रैदास रहै प्रसन्न।।

Scanned with CamScanner

सही अर्थों में भक्तिकाल के रचनाकार समाज के प्रहरी हैं। वे जनसेवा को ही सर्वोपरि रूप में देखते हैं। तुलसी इस संदर्भ में कहते हैं, – "परहित सरिस धर्म नहिं भाई। परपीड़ा सम नहिं अधमाई।"

भक्ति काल के रचनाकार जन-जीवन के साथ जुड़े होने के कारण उन्होंने जनभाषा से जनभावनाओं को वाणी दी। इसलिए भक्तिकाल का साहित्य लोगों के बीच आज भी जीवित है। समाज जीवन के साथ गहरा लगाव होने के कारण ही कबीर कहते हैं,–

सुखिया सब संसार है, खावै और सोवै।
दुखिया दास कबीर है, जागै और रोवै।

इस प्रकार भक्तिकाल में समाज का यथार्थ अंकन हुआ है। भक्तिकाव्यकारों ने समाज की एकता में अनेकता लाने वाले सूत्रों एवं विश्रृंखला के कारण सामाजिक प्रगति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। भक्तिकाव्य में जनता का क्रोध और आक्रोश है और साथ ही एक सुखी समाज की आकांक्षा भी है।

सन्दर्भ

1. भक्तिकाव्य का समाज दर्शन–प्रेमशंकर
2. संत काव्य की सामाजिक प्रासंगिकता–डॉ. रविन्द्रकुमार सिंह
3. भाषा साहित्य और संस्कृति–सम्पा. विमलेश कांति वर्मा, मालती
4. कबीर–प्रो. कृष्णदेव शर्मा
5. हिन्दी के प्राचीन प्रतिनिधि कवि–डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना

Scanned with CamScanner